खिलारी

बनाम

उत्तरप्रदेश राज्य एवं अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 481/2008)

मार्च 13, 2008

[डॉ. अरिजीत पसायत एवं पी. सदाशिवम, जेजे.]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973ः धारा 389 - अपील लंबन के दौरान सजा निलम्बन- हत्या के मामले मे दोषसिद्ध व्यक्ति की रिहाई - हत्या के मामले मे जमानत पर उच्च न्यायालय द्वारा क्रिप्टिक आदेश के तहत स्थिरता की धारणा - निर्णीतः स्वीकार किये जाने योग्य नही है - न्यायिक विवेक तथा प्रासंगिक पहलुओं पर विचार नही किया गया - पुनः नये सिरे से विचार करने हेतु मामला उच्च न्यायालय मे भेजा गया।

प्रत्यर्थी संख्या 02 एवं उसके दो पुत्रो पर आरोप लगाया गया है कि उन्होंने 'एस' पर लोहे की छडों से बेरहमीपूर्वक हमला किया गया जिसके कारण पहुँचने वाली क्षति से एस ने दम तोड़ दिया। प्रत्यर्थी संख्या 02 को अन्तर्गत धारा 302, 506, भारतीय दण्ड संहिता के आरोपों के तहत दोषसिद्ध एवं दण्डादेश दिया गया। प्रत्यर्थी के द्वारा उक्त दण्डादेश को चुनौती देते हुए अपील दायर की गयी, साथ ही एक जमानत का प्रार्थना पत्र इस आशय का पेश किया गया कि मृतक के शरीर पर पायी गई मृत्यु पूर्व चोटें लोहे की छडों से कारित नहीं हो सकती और यह भी आधार लिया गया कि अज्ञात

हमलावरों द्वारा मृतक के शरीर पर चोटें कारित की गई। उच्च न्यायालय द्वारा जमानत स्वीकार की गयी जिसके सम्बन्ध में यह अपील पेश की जा रही है।

अपीलकर्ता- सूचनाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि आक्षेपित आदेश अस्थिर था, क्योंकि दोष सिद्धि तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों की साक्ष्य पर अवधारित थी जो इस सम्भावना को खारिज करती है कि लोहे की छडों से कथित चोटें नहीं पहुँचाई जा सकती हो। अतः उच्च न्यायालय को ऐसे क्रिप्टिक आदेश से जमानत नहीं दी जानी चाहिए थी।

अपीलार्थी संख्या 02 - अभियुक्त के द्वारा यह तर्क दिया गया कि यह एक आम बात है कि उच्च न्यायालय में अपीलों के निस्तारण में लम्बा समय लगता है, अतः त्वरित विचारण एवं अभियुक्त की अभिरक्षा की स्थिति को सन्तुलित करते हुए उच्च न्यायालय ने प्रासंगिक कारकों पर ध्यान दिया और यह जमानत स्वीकार की।

अपील को स्वीकार करते हुए मामला उच्च न्यायालय को अर्भिनिर्धारित किया गया।

निष्कर्ष, उच्च न्यायालय के आदेश से ऐसा दर्शित होता है कि न्यायालय द्वारा न्यायिक विवेक का तथा प्रासंगिक पहलुओं का विवेचन नहीं किया गया, अतः आक्षेपित आदेश स्थिर रहने योग्य नहीं है, अतः खारिज किया जाता है। प्रत्यर्थी संख्या 02 को जारी की गई जमानत खारिज की जाती है, मामला उच्च न्यायालय को पुनः प्रतिप्रेषित किया जाता है कि वह पुनः नए सिरे से विधि एवं तथ्यों पर विचार करते हुए मामला पुनः तय करें। (चरण संख्या 11 एवं 12)

किशोरीलाल बनाम रूपा एवं अन्य **2004 (7) एससीसी 638**; अनवरी बेगम बनाम शेर मोहम्मद **(2005) *7* एससीसी 326** - पर भरोसा किया गया।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील संख्या 481/2008।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आपराधिक अपील संख्या 6724/2006 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 15.11.2006 के विरूद्ध से।

एस.चन्द्र शेखर और जोगेन्द्र कुमार, अपीलकर्ता के लिए।

शैल कुमार द्विवेदी, एएजी, विश्वजीतसिंह, जावेद मोहम्मद राव, कमलेन्द्र मिश्रा, वन्दना मिश्रा एवं विभा द्विवेदी, प्रत्यर्थीगण के लिए।

न्यायालय का निर्णय **डा. अरिजीत पसायत , न्यायमूर्ति** द्वारा सुनाया गया।

1. अनुमति अनुदत्त की गई।

2. इलाहाबाद उच्च न्ययालय की खण्डपीठ द्वारा अापराधिक अपील संख्या 6724/2006 के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी संख्या 02 की ओर से प्रस्तुत जमानत के अावेदन पर पारित आदेश को चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय के समक्ष विद्वान सत्र न्यायाधीश, बागपत द्वारा सैशन प्रकरण संख्या 299/2000 अन्तर्गत धारा 302 एवं 506, भारतीय दण्ड संहिता, 1860 (संक्षेप में भा.दं.सं.) में दी गई धारा 302, भारतीय दण्ड संहिता के तहत आजीवन कारावास की सजा एवं धारा 506, भारतीय दण्ड संहिता के लिए एक साल के कारावास की सजा को चुनौती दी गई। उक्त अपराधों के लिए वह व उसके दो बेटो को शिवकुमार की हत्या के लिए कथित तौर पर दोषी ठहराया गया। इस आदेश को चुनौती देते हुए दोषसिद्धि की अपील और साथ ही अपील लंबित रहने के दौरान जमानत पर रिहा किया जाने का प्रार्थना पत्र को पेश किया गया। आक्षेपित आदेश के तहत खण्डपीठ के द्वारा जमानत की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 02 को जमानत पर रिहा करने का आदेश पारित किया गया। इस आक्षेपित आदेश के तहत उच्च न्यायालय द्वारा यह माना गया कि घटना 09.03.2000 को

08.30 PM पर घटित हुई तथा अभियुक्त संख्या 02 एवं उसके दो पुत्रों ने शिवकुमार (जिसे आगे मृतक कहा जाएगा) की नृंशसात्मकपूर्वक लोहे की छडों से चोटें पहुँचायी एवं उक्त चोटों के परिणामस्वरूप मृतक ने दम तोड़ दिया।

3. एक मात्र यह आधार लिया गया कि मृतक के शरीर पर चोटों के तीन नीलगू निशान चूंकि मृत्यु से पूर्व के है जिनमें से एक खरोंचनुमा तथा चार कुचले हुए घाव शरीर के विभिन्न अंगों पर मौजूद है जो लोहे की छड से नहीं आ सकते। अतः यह आधार लिया गया कि मृतक के ये चोटें किसी अज्ञात हमलावर के द्वारा कारित की गई है।

4. अभियोजन पक्ष तथा उपस्थित अपीलार्थी के द्वारा जमानत की प्रार्थना को खण्डित करते हुए यह तर्क दिया गया कि पी.डब्ल्यू-1, पी.डब्ल्यू-2 और सूचनाकर्ता के द्वारा यह हमला होते हुए देखा गया जो इस घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है तथा पी.डब्ल्यू-3 स्वतंत्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है जिनकी साक्ष्य को विचारण न्ययालय द्वारा विस्तृत विवेचन करते हुए ठोस एवं वैश्वासिक माना है। विचारणीय न्यायालय द्वारा उक्त चोटों की संभावना के बिन्दु पर भी विवेचन किया गया है।

5. उक्त तर्को के आधार पर उच्च न्यायालय के द्वारा जमानत का आक्षेपित आदेश इस निष्कर्ष के साथ पारित किया गया:

> "मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए तथा मृत्यु पूर्व कारित चोटों की स्थितियों को देखते हुए अपीलार्थी को अपील के दौरान जमानत पर रिहा किया जाना उचित समझा जाता है।"

6. अपीलार्थी-सूचनाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रार्थना की गई कि उच्च न्यायालय का उक्त दृष्टिकोण स्पष्ट तौर पर त्रुटिपूर्ण है। अतः तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों

की साक्ष्य पर विश्वास कर व इस तर्क को भी खारिज करते हुए कि यह लोहे की छड से आना संभव नही है, उच्च न्यायालय को एेसा क्रिप्टिक आदेश के द्वारा जमानत स्वीकार नही करनी चाहिए थी। अतः उक्त आलौच्च आदेश खारिज किया जावे।

7. विद्वान लोक अभियोजक ने सूचनाकर्ता के उक्त तर्को का समर्थन किया।

8. अपीलार्थी संख्या 02/अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि यह एक आम बात है कि उच्च न्यायालय में अपीलों के निस्तारण में लम्बा समय लगता है, अतः त्वरित विचारण एवं अभियुक्त की अभिरक्षा की स्थिति को सन्तुलित करते हुए उच्च न्यायालय ने प्रासंगिक कारकों पर ध्यान दिया और यह जमानत स्वीकार की।

9. सजा की अवधि के दौरान जमानत के प्रार्थना पत्र को तय करते समय दोषसिद्धि के निलम्बन तथा अपील के विचारण की स्थितियों को परीक्षित करने के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा विभिन्न दृष्टान्त पारित किए गए है। किशोरीलाल बनाम रूपा व अन्य (2004 (7) एससीसी 638) में यह तय किया गया है कि :-

> "4. धारा 389 अपील लंबित रहने तक दण्डादेश का निलम्बन; अपीलार्थी का जमानत के प्रार्थना पत्र पर जमानत पर छोड़ा जाना तथा दण्डादेश के निलम्बन के मध्य स्पटतः अन्तर है। धारा 389 के विशिष्ट बिन्दु के तहत यह आवश्यक है कि अपीलीय न्यायालय ऐसे कारणों से जो उसके द्वारा अभिलिखित किए जाएंगे आदेश दे सकता है कि उस दण्डादेश या आदेश का निष्पादन जिसके विरूद्ध अपील की गयी है, दोषसिद्धि व्यक्ति द्वारा की गयी अपील के लंबित रहने तक निलम्बित किया जावे और यदि वह व्यक्ति परिराेध में है तो यह भी आदेश दे सकता है कि उसे जमानत पर या उसे अपने बन्ध पत्र पर

छोड़ दिया जावे। ऐसे कारण उल्लेखित करने की आवश्यकता यह निर्देश देती है कि ऐसे कारण सावधानीपूर्वक सारभूत तथ्यों पर विचार करने के उपरान्त प्रासंगिक पहलुओं और निलम्बन का निर्देश देने वाला आदेश सजा और जमानत का अनुदान एक से रूप में पारित नहीं किया जाना चाहिए।

5. अपीलीय न्यायालय निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिए बाध्य है तथा उसे जमानत का प्रार्थना पत्र तय करने के लिए तथा दण्डादेश के निष्पादन के निलम्बन के लिए यह आवश्यक है कि वह मामले के तहत अपने कारणों तथा निष्कर्षों को अभिलिखित करें। प्रस्तुत मामले में उच्च न्यायालय के द्वारा जो कारण तथा तथ्य दण्डादेश के क्रियान्वियति को रोकने के लिए व जमानत के लिए दिए गए है वे केवल अभियुक्त के पक्ष मे पूर्व मे जारी जमानत आदेश व अभियुक्त द्वारा पूर्व मे जमानत पर रिहा होने के समय उसका दुरूपयोग ना करने के तथ्य को ही विचार मे लिया गया है।

10. अनवरी बेगम बनाम शेर मोहम्मद व अन्य (2005 (7) एस.सी.सी. 326) में भी इसी प्रकार यह माना गया कि :

"7. सरसरी तौर पर देखने पर भी उच्च न्यायालय का आदेश बिना न्यायिक विवेक के पारित किया गया आदेश जाहिर होता है। यद्यपि जमानत के प्रार्थना पत्र को तय किए जाते समय साक्ष्य एवं दस्तावेजों का विस्तृत विवेचन करना तथा निष्कर्ष का गुणावगुण पर टिप्पणी किया जाने से बचना चाहिए फिर भी न्यायालय को जमानत के प्रार्थना पत्र को तय करते समय इस स्थिति से सन्तुष्ट होना चाहिए

कि क्या प्रथम दृष्टया मामला है अथवा नहीं परन्तु सम्पूर्ण मामले के गुण दोषों का अवलोकन आवश्यक नहीं है। जमानत के प्रार्थना पत्र को तय किए जाते समय न्यायालय को अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग करना आवश्यक है, ना कि सम्पूर्ण मामले का निस्तारण किया जाना है।

8. यह आवश्यक है कि जब अभियुक्त पर इतने जघन्य अपरासध का आरोप हो तो आदेश में यह निर्दिष्ट किया जावे कि जमानत का प्रार्थना पत्र क्यों स्वीकार किया जा रहा है। न्यायालयों के लिए जमानत का प्रार्थना पत्र तय किए जाते समय निम्नलिखित कारको को भी अन्य परिस्थितियों के साथ ध्यान में रखना आवश्यक है -

1. आरोप की प्रकृति-गम्भीरता तथा दोषसिद्धि के मामलें में सजा और उसके समर्थन में साक्ष्य का प्रमाण,

2. साक्षियों के साथ छेड़छाड़ तथा परिवादी के साथ धमकी की युक्तियुक्त आशंका,

3. प्रथम दृष्टया आरोप के सम्बन्ध में न्यायालय की सन्तुष्टि।

ऐसे कारकों का अभाव जिस आदेश मे हो वह न्यायिक मस्तिष्क के प्रयोग को ना करते हुए पारित आदेश है जैसा कि इस न्यायालय के द्वारा राम गोविन्द उपाध्याय बनाम सुर्दशन सिंह व अन्य [(2002) 3 एससीसी 598], पूरन वगैरह बनाम रामविलास व अन्य [(2001) 6 एससीसी 338)] और कल्याण चन्द्र सरकार बनाम राजेश रंजन उर्फ

पप्पू यादव व अन्य [जेटी 2004 (3) एससी 442] में देखा गया है।"

11. उक्त समस्त विवेचन से उच्च न्यायालय के आदेश में यह दर्शित होता है कि न्यायालय द्वारा न्यायिक विवेक का सम्पूर्णतः पालन नहीं किया गया और ना ही प्रासंगिक पहलुओं पर विचार किया गया।

12. अतः आलौच्चय आदेश स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है, खारिज किया जाता है। प्रत्यर्थी संख्या 02 को दी गई जमानत निरस्त की जाती है। मामला उच्च न्यायालय को पुनः प्रेषित किया जाता है कि वह नवीन सिरे से समस्त तथ्यों पर विधि अनुसार विचार करने के उपरान्त आदेश पारित करें।

13. उपरोक्त सीमा तक अपील स्वीकार की जाती है।

अपील स्वीकार।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी माधवी दिनकर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।